International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
www.socialresearchjournals.com
Volume 2; Issue 8; August 2016; Page No. 101-104

आदर्श समाज निर्माण के लिए पंचशिल का महत्त्व

डॉ0 रविन्द्र नारायणराव मुन्द्रे

इतिहास विभाग प्रमुख, श्रीमती राधादेवी गोयनका महिला महाविद्यालय, अकोला, महाराष्ट्र, भारत।

सारांश

आम उपासक से लेकर भिक्खू या अर्हत बनने तक का सफर यदी हमे करना है, तो पंचशिल का आचरण जरूरी है। तथागत बुध्द ने अपने पंचवर्गीय भिक्खू को उपदेश करते हुये पंचशिल तत्व बतलाए। किसी को हताहत न करना, चोरी न करना, व्यभिचार न करना, झुठ न बोलना, नशीली वस्तूओं का सेवन न करना यह वह पांच तत्व है।

तथागत बुध्द को अहिंसा तत्व Need to kill, Will to kill न इस सिध्दांत पर निर्भर था। मानसिक और नैतिक हिम्मत बढाने की शक्ती अहिंसा मे होने के कारण मानव समाज का आत्मविश्वास बढकर वह समाज मानव संस्कृती के रक्षण के लिए तत्पर होता है। इसलिए अहिंसा का तत्व पंचशिल में सर्वश्रेष्ठ है। जब आपको कोई भी अन्य उपाय दृष्टीगोचर न हो और आदमी बहुत ही मजबूर हो तव भी किसी अन्य व्यक्ति की वस्तू लेना उचित नही ठहराया जा सकता । सामाजिक स्वाथ्य के लिए यह वर्तन अनिवार्य हो जाता हैं। वासनाधंता के समान कुछ नही है, वासना सबसे उग्र उत्तेजना कही जा सकती है यदी सत्य की लालच वासना की उग्रता से बढकर न होती तो हम में से कितने लोग धार्मिक जीवन बिता सकते थे। विवेक जागृत रखकर सत्य बोलना अनिवार्य है। यदी झुठ बोलने से किसी की जान बचती है तो वह झुठ सर्वश्रेष्ठ सत्य है। नशीली वस्तू इन्सान से मुर्खतापूर्ण व्यवहार करवाते है। इतना ही नही उसे पाप का भागीदार भी बनाते है। जो सद्गृहस्थ धम्माचरण मे रस लेता है उसने किसी भी नशीले पदार्थ का सेवन नही करना चाहिये। जो पीने वाले है उनका समर्थन भी नही होना चाहिये।

समाज मे आचरण करते समय फिर वह सही है या गलत इसके लिए नियमों का होना आवश्यक हैं। अच्छा आचरण केवल और केवल पंचशिल से ही हो सकता है और आदर्श समाज का मापदंड पंचशिल ही होना चाहिए।

मुख्य शब्द: पंचशिल, बुध्द धम्म, तथागत बुध्द।

प्रस्तावना

बुध्द धम्म में सम्मिलीत पांच तत्त्वों को पंचशिल कहा जाता हैं। आम उपासक से लेकर भिक्खू या अर्हत बनने तक का सफर यदि हमे करना है, तो पंचशिल से ही हो सकता हैं। पवित्रता के पथ पर चलने के लिये हमे पंचशिल रास्ता बताते हैं। यह ऐसा तत्व है जो मानव को न केवल समाज के प्रति उत्तरदायी बनता है, बल्कि नैतिकता स्थापित करने के लिये, हमे प्रेरित करता हैं। ''The Five Percepts are the basis of Buddhist morality''[1] सारनाथ में अपने प्रथम उपदेश पर व्याख्यान में भिक्खूओं को उपदेश करते हुये तथागत बुध्द ने पंचशिल तत्व बतलाए। जब भिक्खूओं ने बुध्द को अपने धम्म की परिभाषा करने की विनंती कि, तब बुध्द ने तहेदिल से स्वीकृत किया। तथागत बुध्द अपने उत्तर का प्रारंभ करते समय पवित्रता का पथ क्या है? यह बतलाते हुये कहते है कि, ''पवित्रता का पथ यह सिखाता है की जो आदमी अच्छा बनना चाहता है उसके लिये यह आवश्यक है कि जीवन में आदर्शो का कोई मापदंड स्विकार करे। इसके अनुसार अच्छे जीवन आदर्श के पांच मान्य मापदंड है।

1) किसी को हताहत न करना।
2) चोरी न करना।अर्थात दुसरे की चीज को अपनी न बना लेना।
3) व्यभिचार न करना।
4) झूठ न बोलना।
5) नशीली वस्तूओं का सेवन व प्रमाद न करना।''[2]

बुध्द द्वारा बतलाए गये पांच प्रमाण बुध्द धम्म के पंचशिल के नाम से जाने जाते हैं। बुध्द उन पांचो प्रमाणों को स्वीकृत करने के लिये, हर व्यक्ति के लिये अनिवार्य मानते है, ''हर इन्सान के लिये जीवन को सफल बनाने के लिए कोई ना कोई मापदंड होना ही चाहिये, जिससे वह अपने अच्छाई एवं बुराई को माप सके''[3]।

प्रथम शिल – पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामी।

इसका विस्तार से अर्थ निम्न प्रकार से हैं। छोटे से छोटे जानवर को लेकर इन्सान तक किसी भी प्रकार की हत्या नही करोगे। तुम प्राणीमात्रों को रक्षा प्रदान करोगे। बुध्द दर्शन के धम्मिक सूत्त में बताया गया हैं कि, ''इन्सान ने न तो किसी की हत्या करनी चाहिये और ना हि ऐसा करने के लिये किसी को मजबूर करना चाहिये। साथ ही हर मानव प्राणी की हत्या करने से बचाना चाहिये, फिर वह प्रबल भले ही हो या फिर वह दुर्बल हो। [4]''

इससे यह सिध्द होता है की बुध्द हमें अहिंसा का रास्ता बतलाते हैं। किंतु बुध्द की अहिंसा 'Need to kill, will to kill' इस सिध्दांत पर निर्भर थी। ''अहिंसा दो तर्क पर आधारित है – आवश्यकता के लिए हत्या और हत्या करने की इच्छा होना। यदि हमारे देश पर अन्य देश का आक्रमण होता हैं, तब हाथ मे तलवार लेकर राष्ट्र की रक्षा हेतू मैदान–ए–जंग मे उतरना और शत्रूओं का पतन करना यह हर एक नागरिक का प्रथम दायित्व हैं। राष्ट्र हित मे की गयी हिंसा कोई गलत कार्य नही हो सकता। इसे बौध्द दर्शन मे उच्चतम प्रकारकी अहिंसा कहा जाता हैं। दुसरा हत्या करने की इच्छा होने का मतलब है खूद के संतुष्टी के लिये जानवर की बलि देना, पशुहत्या करना यह हिंसा हि हैं।''[5]

अहिंसा यह झुकने का नाम नही हो सकता क्योंकि शरण जाना यह एक आपत्ति है, शरण जाने से मानसिक दासता (गुलामी) बढती है, और मानसिक दासता को जो लोग स्विकृत करते हैं। उनकी तरक्की रूक जाती हैं। समूचे विश्व का इतिहास इस के लिए एक उदाहरण हैं। इसलिए मानव विकास के लिए अहिंसा तत्व का पालन अपने आचरण में लाना अनिवार्य हैं। ''मानवी संस्कृती के संरक्षण के लिए सत्य और अहिंसा इस तत्व की अनिवार्यता है।''[6] मानसिक और नैतिक हिंम्मत बढाने की शक्ति अहिंसा मे होने के

कारण मानव समाज का आत्मविश्वास बढ कर वह समाज मानव संस्कृती के रक्षण के लिए तत्पर होता हैं।

बुध्द दर्शन के तेविज्ज सुत्त मे कहा गया है कि, ''जो जीवित है उस का प्राण हरण न करके वह प्रत्येक प्राणी की हत्या करने से विरत रहता है। वह लाठी और तलवार का परित्याग कर देता है और विनम्रता तथा करूणा से ओत–प्रोत वह प्रत्येक प्राणी के साथ दया और मैत्री का व्यवहार करता है।''[7] तमाम संसार को दोस्ती भावना से भर देना ही मानव प्राणी का अतिंम उद्देश होना चाहिये, फिर चाहे कोई छोटे हो या बडा, कोई भी इन्सान ऐसा नही होना चाहिये जिससे डर हो तब सभी मानव प्राणी शांती के पग पर चलना चाहेंगे। इस शिल की भावना के अनुसार संसार के सभी बौध्द पशुहिंसा से अलग रहे है व न तो मन बदलाव के लिये ही हिंसा करते रहे है और न ही यज्ञ यागो के लिये।

द्वितीय शिल – अदिन्नदाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामी।

यह शिल बताता है कि, तूम न तो किसी को लूटोगे ना ही किसी की कोई चीज चुराओगे। बल्कि हर किसी की सहाय्यता करोगे। जिससे उसे अपने श्रम का फल मिले। बौध्द धर्म की अंतर्गत भावना समाजवाद की हैं।'' सामाजिक उद्देश की सिध्दी के लिये बुध्द का धम्म मिलजुल कर काम करने की शिक्षा देता है। यह पूर्ण रूप से भाईचारे का सामाजिक जीवन बिताने की आज्ञा देता है। इसलिये यह उस औद्योगिकीकरण का सक्त विरोधी है, जिस ने सतत दुर्गन्धपूर्ण, अनैतिक, करूणा विरहीत धनार्जन के लिये किये जाने वाले संघर्ष को ही मानवी जीवन का परामर्श बना रखा है। यह संघर्ष तथाकथित विकसित देशो की जडो को ही खोकला कर रहा है। धन के पीछे अन्धे होकर दौडने के आकर्षण ने व्यापार–केन्द्रों मे मानवीय भावनाओं के लिये कुछ भी स्थान नही छोडा है। मजदूर की पूंजीपती के प्रति, किसान की जमीनदार के प्रति, माल की खपत करने वाले की माल पैदा करने वालो की, माल की खपत कराने वाले के प्रति जो भावना है, जरा उस की ओर तो देखो। क्या यह सन्देह और शत्रुता की भावना के अतिरिक्त और कुछ हैं?''[8]

निजीगत स्वार्थ का संरक्षण ही व्यक्ती का प्रथम कर्तव्य माना जाता हैं। यदी कोई अपने निजी स्वार्थ की उम्मीद करता है तो ऐसे व्यक्ती के साथ उदासिनता का व्यवहार किया जाता है। क्या पूंजी का कुछ लोगो के हाथो मे होना ही नैतिकता के कसोटी पर खरा उत्तर सकता हैं। ''बिना किसी श्रम के, बिना किसी दक्षता के, बिना किसी विशेष योग्यता के, बिना किसी सूझ–बूझ के कुछ आदमी लखपती और करोडपती बन जाते है। यह चोरी नही तो और क्या है?''[9]

जब आपको कोई भी अन्य उपाय दृष्टीगोचर न हो और आदमी बहुत ही मजबूर हो तब भी किसी अन्य व्यक्ति कि वस्तू लेना उचित नही ठहराया जा सकता। सामाजिक स्वास्थ्य के लिये व्यक्ति को अपनी स्वार्थी भावना को त्यागना होगा, यह त्याग की भावना अनिवार्य बन जाती है। आगे धम्मिक सूत्त मे कहा गया है कि, ''जो धर्म का जानकार है, ऐसे शिष्य को किसी भी स्थान से किसी भी चीज की चोरी करने से विरत रहना चाहिये। किसी दुसरे से भी किसी भी चीज की चोरी करने से विरत करने वाले है, ऐसे लोगो के किसी भी ऐसे कर्म का समर्थन नही करना चाहिये। उसे हर तरह की चोरी से विरत रहना चाहिये।''[10] बुध्द ने अपने जीवन यापन करने के लिए अच्छा मार्ग बतलाया हैं, जिसे बुध्द की सम्यक आजिवीका कहा जाता हैं। ''प्रत्येक व्यक्ती को अपनी जीविका कमानी ही होती है। लेकिन अपनी जीविका कमाने के कुछ तरीके है और उन तरीकों मे कुछ बुरे है और कुछ अच्छे। बुरे तरिके है, जो किसी को चोट पहुचांते है अथवा किसी के साथ अन्याय करते है। अच्छे तरिके वे है जिनसे आदमी बिना किसी को हानि पहुचांए अथवा बिना किसी के साथ अन्याय किए अपनी जीवीका कमाता हैं। यही सम्यक आजीविका हैं।[11]

तिसरा शिल – कामेसु मिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामी

इसका अर्थ निम्न प्रकार हैं। तुम्हे न अन्य की पत्नी के साथ और न अन्य किसी व्यक्ति के साथ अनैतिक तालुकात स्थापित नही करना चाहिये, तुम्हे संयत जीवन बीताना चाहिये। भिक्खू और उपासक दोनो भी बुध्द धम्म के आधारस्तंभ है, इसलिए दोनो ने शिल का पूर्णरूपेन आचरण करना चाहिये।

''कामेन संवरो साधु, साधु वाचाय संवरों
मनसा संवरो साधु, साधु सब्बत्थ संवरो, ति।।''[12]

अर्थात कामवासना पर संयम रखना उत्तम है, वाणी से संयम रखना उत्तम है, मन पर संयम रखना उत्तम है और सभी प्रकार से संयम रखना उत्तम है।

''एक बुध्दीमान को व्यभिचार से ऐसे ही बचना चाहिये जैसे वह कोई जलते हुये अंगारों का गढा हो। जो ब्रम्हचर्य व्रत का पालन न कर सके उसे भी व्यभिचार नही करना चाहिये।''[13] वासनांधता के समान कुछ नही है, वासना सब से उग्र उत्तेजना कही जा सकती है। यदी सत्य की लालच वासना की उग्रता से बढ कर न होती तो हम से कितने धार्मिक जीवन बिता सकते थे। धम्मपद मे कहा है कि, ''सौन्दर्य आदमी के चित्त को एकदम जाल मे फंसा देता है। आदमी सौन्दर्य के अनित्यस्वरूप का विचार ही नही करता। जो मूर्ख बाहय रूप से ही आकर्षित हो जाता है, वह किसी भी वस्तु के यथार्थ रूप को जान ही कैसे सकता है। जैसे रेश्मी किडा अपने कोये मे ही उलझा रहता है, उसी प्रकार वह आदमी भी उपने ही इन्द्रिय सुख के जाल मे फंसा रहता है। लेकिन जो बुध्दीमान आदमी अपने को ऐसी बातो से पृथक रख सकता है, वह ऐसी बातो से मुक्त रहता है और दुःख का अन्त कर सकता है।''[14]

बुध्द ने भिक्खू संध मे बौध्द भिक्खूओं को नारी के संपर्क मे आने से उनके साथ कैसा आचरण करना चाहिये इसका मंत्र भी दिया है। ''यदि तुम्हे किसी स्त्री से कोई बातचीत करनी हो, तो पवित्र हदय से करो। यदि कोई वृध्दा हो, तो उसे अपनी माता समझो, यदि प्रौढा हो तो उसे अपनी बहन समझो यदि छोटी हो तो उसे अपनी छोटी बहन समझो, यदि बच्ची हो तो उसका आदर करो उससे कोमलता का व्यवहार करों।''[15]

यद्यपि धम्म सभी अयोग्य लैंगिक आचरणों का विरोध करता है फिर भी इसका यह मतलब नही होता कि, जो लोग उत्तम जीवन बिताने की मनशा रखते है लैंगिक आचरण से उन्हे अलग रखा गया हैं। यदी लैंगिक आचरण उत्तम जीवन का मूलतः विरोधी होता तो सिध्दार्थ के लिए बोधी ज्ञान प्राप्त कर पाना असंभव सा होता। सिध्दार्थ न केवल शादीशुदा थे बल्कि ऐशोआराम जिंदगी बिताते थे। लैंगिक आसक्ती का धम्म विरोध करता हैं। उसका यह कारण है कि यह शारिरीक सुख के लिए एक लालच पैदा कर देती है, और शरीर के कोई भाग बिमारी के कारण बन जाते हैं। यद्यपि शादी करने का उद्देश्य वंश वेल को बनाये रखना हैं। किंतु हकिकत मे जो शादीयॉ की जाती है वे भावी संतती के लिए नही की जाती बल्कि शादी करने वाले पक्ष–द्वय के स्वार्थ और सुखभोग के लिये। एक पत्नी या एक पती के चुनाव मे पारिवारीक रितीरिवाजो और भौतिक स्वार्थ का इतना विचार किया जाता है कि, न स्वाथ का कोई मूल्य होता है, न सुदंरता का, न बुध्दी का और ना हि हदय का। वंश परंपरा चालु रखने के अच्छे उद्देश्य से जो शादीयॉ रचायी जाती है उसका धम्म मे विरोध होने का सवाल ही पैदा नही होता। कई बौध्द संपद्राय का मत हैं कि, एक गृहस्थ उपासक न केवल अनागामी बल्कि एक अर्हत तक बन सकता हैं। ''मिलिनद नरेश को

उत्तर देते समय स्थविर नागसेन ने इस बात को स्विकार किया है कि घर पर रहने वाले गृहस्थों ने, सांसारिक सुखों का उपभोग करते हुए परं शान्तीप्रद निर्वाण को प्राप्त किया हैं। उपगुप्त महास्थविर ने अनक विवाहित स्त्री – पुरूषों को अर्हत तक का लाभ कराया हैं।''[16]

चतुर्थ शिल – मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामी

झुठ को अपने आचरण मे न लाना अथवा विवेक जागृत रखकर केवल सत्य ही बोलना ये सब करते समय किसी को क्षती नहीं पहुचनी चाहिए बल्कि मैत्रीभाव होना चाहिए। धम्मिक सुत्त मे कहा गया कि, ''जब कोई किसी सभा या समिती मे उपस्थित हो तो उसे न तो किसी से असत्य बोलना चाहिये और न बुलवाना चाहिये और न किसी दुसरे झुठ बोलने वाले के साथ सहमती ही प्रकट करनी चाहिये। उस प्रकार के मिथ्या–भाषण से बचना चाहिये।''[17] तेविज्ज सूत्त का परामर्श देते हुये कहा गया है कि, ''असत्य से विरत रहकर वह मिथ्यात्व से दूर रहता है। वह सत्य बोलता हैं, सत्य का वह कभी त्याग नही करता। वह छल– कपट से अपने जैसे लोगों को कष्ट नही देता।''[18]

बदनामी, खुशामद, झुठी गवाह देना ये सभी मित्थ्या भाषण के विविध रूप हैं। बुध्द की सत्य और असत्य धारणा हमे स्पष्ट करने हेतु यहॉ पर राजा मिलिंद और भिक्खू नागसेन का संवाद प्रस्तुत करना उचित होगा। '' भिक्खू नागसेन, बुध्द ने ऐसा कहा है कि, जानबूझकर झूठ बोलने से पाराजिक दोष (भिक्खू के द्वारा घटित चार मुख्य दोषों में से एक दोष, इस दोष से भिक्खू का भिक्खूपण जा सकता है।) होता है और आगे ऐसे भी कहते है की, जानबुझकर झुठ बोलने से साधारण दोष लगता है। इसलिए अन्य भिक्खू के पास जाकर उस दोष का स्विकार करना चाहिये।....

हे राजा, भगवान बुध्द के अनुसार भयंकर और साधारण ऐसे दो प्रकार हैं।

हे राजा, एक आदमी दुसरे को हाथ से मारता है, तब आप उसे कौन सा दंड दोगे।

भिक्खू, अगर वो माफी नही मांगता तो मै उसे एक स्वर्णमुद्रा का दंड करूंगा।

किंतु हे राजन, अगर उसने आपको हाथ से मारा तो आप उसको किस प्रकार का दंड देंगे?

भिक्खू, हम उसके हाथ ही काट डालेंगे, पैर तोड डालेंगे, उसका सर कलम कर देंगे,

उसको मार डालेंगे, इतना ही नहीं उसकी आने वाली सात नसलों को नष्ट कर देंगे।

हे राजन, इसमे ऐसा क्या विशेष अंतर है यदी एक आदमी दुसरे को मारता है तो आप उसे एक स्वर्णमुद्रा का दण्ड देते है और वही आदमी जब आपको मारता है तो आप उसे हाथ पैर ही नही अपितू उसे मार डालने का दण्ड देते है, इसका क्या कारण है?

हे भिक्खू, इन दो आदमीयों में अन्तर है।

इसी प्रकार हे राजन, असत्य कहने मे भी नियम के अनुसार दो प्रकार होते हैं। एक भयंकर झुठ बोलना और दुसरा साधारण झुठ बोलना।''[19]

इस संवाद से यह प्रतीत होता है कि, बुध्द ने अहिंसा और हिंसा मे जिस प्रकार से अंतर रखा है और उस हिंसा को श्रेष्ठतम माना है, जो अनिवार्य है। साथोसाथ बुध्द ने सत्य और असत्य के सिध्दांत को भी इसी आधार पर अमंल मे लाया हैं। यदी झुठ बोलने से किसी की जान बचती है तो वह झुठ सर्वश्रेष्ठ सत्य हैं।

पंचम शिल – सुरामेरय – मज्ज पमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामी

किसी भी नशीली वस्तू का ग्रहण नही करना। नशीली वस्तू इन्सान से मूर्खतापूर्ण व्यवहार करवाते है। इतना ही नही उसे पाप का भागीदार बनाते हैं। ''जो सदगृहस्थ धर्माचरण मे रस लेता है, उसे किसी भी नशीले पदार्थ का सेवन नही करना चाहिये। जो पीने वाले है, उसे उन का समर्थन नही करना चाहिये। शराब आदमी को पागल बना देती है।''[20] बुध्द दर्शन मे शराब का सेवन करना गलत माना गया है। ''सुरा और कच्ची शराब पीने में पाचित्तिय है।''[21]

शराब और अन्य नशीली वस्तूओं का सेवन करना अज्ञानता हैं। दुसरो का नशीली वस्तूओंका सेवन करने के लिये प्रेरित करना पाप होता हैं। किसी भी प्रकार के नशे मे आदमी दुसरों के प्रति गलत व्यवहार करने लगता है और साथ ही गाली गलोच भी करता है। शराब की नशा कई अपराधो को जन्म देती हैं। इसलिए अपने आप को ऐसे स्थिती मे रखना दूसरो के लिये खतरे पैदा करना है। '' नशा चाहे वो किसी भी प्रकार का हो इन्सान के शौहरत और सफलता दोनो को नष्ट कर देती हैं। झगडों तथा बिमारी का कारण बनती है इन्सान के शरीर पर कपडों की कोई एहमीयत नही होती, साथ ही आत्मसम्मान का कोई मूल्य नही होता, परिणामस्वरूप इन्सान ज्ञान प्राप्ती से बहोत दूर चले जाता हैं।''[22] सिगालोवाद सुत्त।

''भारत मे बौध्द धर्म ने ही सर्वप्रथम नशीले पदार्थो का सेवन निषिध्द ठहराया । धर्म जो शराब आदि नशीले पदार्थो का सेवन निषिध्द ठहराता है उसका कारण है कि नशा करने से आदमी तर्कानुकुलू चिन्तन करने मे असमर्थ हो जाता है और वह तर्क विरूध्द आचरण करणे के लिये भी स्वतंत्र हो जाता हैं।''[23]

''चिनी ब्रम्हजाल सुत्त में बौध्दों के लिये दारू बेचना मना है, बेचने को आसान बनाना भी निषिध्द है। ऐसा करने से किसी दूसरे की पाप कर्म मे वृध्दी हो सकती है।''[24]

इन्सान जितने अधिक नियमों का अपने आचरण मे लाता है उतना ही उसे लाभ होता है। लंबें समय तक यदि इंसान नियमों का अंमल करता है तो, लंबे समय तक अच्छे कर्मो का लाभ भी होता है। साथ ही जो इंसान सभी नियमो का पालन करता है न की उल्लंघन तो उसका उत्कर्ष ही होगा, उसका जीवन निरंतर अमनचमन मे रहेगा।

''योध सेवति दुस्सीले सीलवन्ते न सेवति।
बत्थुवीतिक्कमे दोसं न पस्सति अविद्यसु।।
मिच्छासंकप्प बहुलो इंद्रियानी न रक्खति।
एव रूपरस्स व सीलं जायते हीनभागियं।।''[25]

अर्थात जो इन्सान पापीयों के साथ रहता है और शिलप्राप्त लोगो के साथ नही रहता, जो नियमोंका उल्लंघन करने वाला होता है, जिस के मन में निरंतर पापो का ही सैलाब चलता है, जो अपने शरिर का रक्षण नही कर सकता ऐसे इंसान को हम शीलवान कहे भी तो कैसे?

उपसंहार

1) अच्छी जिंदगी बिताने के लिये जीवन में अच्छे मापदण्ड होना अनिवार्य हो जाता हैं।
2) समाज में आचरण करते समय फीर वह सही है या, गलत इसके लिये नियमों का होना आवश्यक हैं। अच्छे आचरण केवल और पंचशिल में ही मिल सकत हैं। अन्य कही नही मिल सकते ऐसा मेरा मानना हैं।
3) पंचशिल पूर्णरूपेन मानव समाज को सामाजिकता प्रदान करता हैं। इसलिए बुध्द का धम्म समाजवादी हैं न की पूंजीवादी।
4) यदी समाज का हर इंसान पंचशिल तत्व का आचरण करेगा तो उसके आदर्श समाज निर्माण होकर ही रहेगा, इसमे मूझे कोई संदेह नही।

सब्बपापस्स अकरणं कुसलस्स उपसंपदा।
सचित्तपरिदपनं एतं बुध्दानं सासनं।।

संदर्भ

1. Dhammika S. *Good Question Good Answer*, Buddha Dhamma Mandal Society, Singapore. 2006, Page No. 28.
2. आंबेडकर, (डॉ0) बी0 आर- *भगवान बुध्द और उनका धर्म,* अनुः डॉ0 भदंत आनंद कौसल्यायन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली. 2007, पृष्ठ क्र. 151।
3. तत्रैव, पृष्ठ क्र. 152
4. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* अनः–डॉ. भदंत आनंद कौसल्यायन, सिध्दार्थ गौतम शिक्षण व संस्कृती समिती, धनसारी, जि. अलिगढ (उत्तर प्रदेश). 1989, पृष्ठ क्र. 48
5. आंबेडकर, (डॉ.) भी.रा. (संस्थापक). प्रबुध्द भारत *(साप्ताहिक),* मुंबई, 1953.
6. गांजरे, (प्रा) मा. फ. *डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची भाषणे,* खंड–4, अशोक प्रकाशन, नागपूर. 1975, पृष्ठ क्र. 67.
7. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* अनुः–डॉ. भदंत आनंद कौसल्यायन, उपरोक्त, 1989, पृष्ठ क्र. 48.
8. तत्रैव, पृष्ठ क्र. 59.
9. तत्रैव, पृष्ठ क्र. 60.
10. तत्रैव, पृष्ठ क्र. 58.
11. आंबेडकर, (डॉ.) बी. आर. *भगवान बुध्द और उनका धर्म,* 2007, पृष्ठ क्र. 155.
12. विमलकिर्ती, (डॉ.) (अनु.). *मिलिंद प्रश्न,* क्षितिज पब्लीकेशन, नागपूर, 2008, पृष्ठ क्र. 162.
13. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* 1989, पृष्ठ क्र. 60.
14. तत्रैव, पृष्ठ क्र. 61.
15. गांजरे, (प्रा) मा. फ. *डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची भाषणे,* खंड–6, अशोक प्रकाशन, नागपूर. 1976, पृष्ठ क्र. 154.
16. नरसु, पी. लक्ष्मीण *बौध्द धर्म का सार,* 1989, पृष्ठ क्र. 64.
17. उराडे, ॲड.एस.के. बुध्द धम्म में नैतिकता का स्थान, *दि पीपल्स ॲडव्हाईजर,* ऑक्टोबर–डिसेंबर, नागपूर, 2008.
18. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* 1989, पृष्ठ क्र. 65.
19. विमलकिर्ती, (डॉ.) (अनु.). *मिलिंद प्रश्न,* 2008, पृष्ठ क्र. 181.
20. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* 1989, पृष्ठ क्र. 67.
21. सांकृत्यायन, राहुल (अनु.). *विनय– पिटक,* त्रिपिटक प्रकाशन प्रतिष्ठान, नागपूर, 2006, पृष्ठ क्र. 61.
22. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* 1989, पृष्ठ क्र. 87.
23. उराडे, ॲड.एस.के. बुध्द धम्म में नैतिकता का स्थान, *दि पीपल्स ॲडव्हाईजर,* ऑक्टोबर–डिसेंबर, नागपूर, 2008.
24. नरसु, पी. लक्ष्मी. *बौध्द धर्म का सार,* 1989, पृष्ठ क्र. 69.
25. पाटील, किर्ती (संपा.). *बौध्द धम्म जिज्ञासा,* विकास पाटील, नागपूर, 1997, पृष्ठ क्र. 149.